

Dr. G D Gothi

former Epidemiologist

1995

I did my MPH in USA (Columbia University 1955) but I decided that I would work for my country because money did not matter to me... I must say, my knowledge of TB broadened after joining the NTI, in 1961. I went there with a narrow mind, thinking that I knew all about TB. On 17th August 1961, seven days after I joined, I was sent to Anantapur with a team of six doctors, six LTs and six TOs. This was the first ever on the job field training for medical as well as non-medical personnel. The training lasted six months. What was there in Anantapur? No good hotels, even moderate ones. We had to eat whatever food that was available. I taught X-ray reading and developed from scratch almost everything... For e.g., case index cards were developed by me, Mr I Thorup and Mr SS Nair. I took the burden of training the first five batches and with the experiences gained, the training period was reduced from six months to four months and then to three months.

I also took part in the training activities at the LWSTC in Bangalore... The NTI has given so much. I will give you an example. The direct BCG vaccination studies first began in NTI. As a result, BCG vaccination could be given without a tuberculin test. This increased efficiency and coverages of BCG and saved a lot of money. The NTI should be in the forefront of TB research activities. But, it pains me to tell you that now NTI is in the background. It may be due to administrative constraints in the government...research institutes must be given a free hand. There should be freedom in the day to day management of work. At NTI there was so much freedom then. Even the trainees were free to discuss and share knowledge.

डा.जी.डी. गोठी भूतपूर्व ऐपिडिमोलोजिस्ट

मैंने अपना एम.पी.एच. १९५५ में कोलम्बिया विश्वविद्यालय अमेरिका से किया, और यह निर्णय लिया कि मैं अपने देश के लिए कार्य करूंगा, क्योंकि पैसा मेरे लिए देश से अधिक महत्वपूर्ण नहीं था। राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान में १९६१ में प्रवेश के बाद क्षयरोग के क्षेत्र में मेरा ज्ञान और ज्यादा बढ़ गया तब मेरे विचार संकुचित थे क्योंकि मैं सोचता था कि मैं क्षयरोग के बारे में सबकुछ जानता हूँ।

१७ अगस्त सन् १९६१ को साक्षात के सात दिन के बाद मुझे अनन्तपुर भेजा गया। मेरी टीम में ६ डॉक्टर, ६ प्रयोगशाला प्रविधिज्ञ तथा ६ चिकित्सा आयोजक थे। यह चिकित्सीय एवं गैर चिकित्सीय लोगों की पहली फील्ड ट्रेनिंग थी। ६ माह तक प्रशिक्षण चला। अनन्तपुर में सभी आवश्यक सुविधाओं का अभाव था, जैसे एक्सरे पढ़ना तथा अन्य कार्य करना। खाने के लिए जो भी मिल गया उसी में सन्तुष्ट थे। केस इनडेक्स कार्ड मेरे द्वारा तथा आई.बी. थूप और श्री.एस.एस. नायर द्वारा बनाए गए। मैंने पहले पाँच बैचों की ट्रेनिंग का भार उठाया जिसके अनुभव के बाद प्रशिक्षण का कार्य पहले बैच के बाद ६ माह से ४ माह और बाद में ३ माह हो गया।

मैंने लेडी विलिंगडन राज्य क्षयरोग केन्द्र, बेंगलूर में चल रहे प्रशिक्षण कार्य में भी भाग लिया। राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान ने देश को बहुत कुछ दिया है। उदाहरण के लिए बी.सी.जी. वैक्सीन सीधे देने का प्रयत्न संस्थान में पहले आरम्भ किया गया जिसके परिणाम स्वरूप बी.सी.जी. वैक्सीन बिना ट्युबरकुलिन टेस्ट के सम्भव हो सका।

इससे टीकाकरण के क्षेत्र में प्रगति हुयी तथा पैसों की भी बचत हुयी। राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान, क्षयरोग के क्षेत्र में तथा अन्य खोज कार्य में सबसे आगे रहा। परन्तु यह कहते हुए मुझे दुख होता है कि अब राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान नेपथ्य में जा रहा है। इसका मूल कारण सरकार के प्रशासनिक अधिकारियों का हस्तक्षेप है। संस्थान को कार्य करने की पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए। पहले राष्ट्रीय क्षयरोग संस्थान को इतनी स्वतंत्रता थी कि प्रशिक्षणार्थी भी स्वतन्त्र रूप से विचार विमर्श कर अपना ज्ञान ताजा करते थे।